P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 **SHRINKHALA :** VOL-II * ISSUE-IV*December-2014
E: ISSN NO.: 2349-980X

डॉ. भीमराव अम्बेडकर एवं दलित चेतना

सारांश

भारतीय समाज संरचना में सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ सघर्ष करने वाले लोग कम रहे हैं। इतिहास के विकासक्रम में ऐसे गिने–चुने नाम हैं, जिन्होंने यथास्थितिवाद, समाज में व्याप्त कुरीतियों, अन्धविश्वासों, रूढ़ियों, शोषण, उत्पीड़न, दमन और गैर–बराबरी के लिखाफ आवाज बुलन्द की। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने अपने समय में प्रचलित कट्टरपंथी एवं अमानवीय रूढ़ियों, परम्पराओं व मान्यताओं के खिलाफ न केवल संदेश दिया, वरन् अन्याय के प्रतिरोध, न्याय व्यवस्था और सामाजिक समानता के लिए किए जाने वाले संघर्ष को नेतृत्व भी प्रदान किया।

मुख्य शब्द : सामाजिक, दलित चेतना, शैक्षणिक और सांस्कृतिक

महेश कुमार रचियता
व्याख्याता,
राजनीतिक विभाग,
डॉ. बी.आर.ए. राज.
महाविद्यालय, श्रीगंगानगर
(राज.)

प्रस्तावना

अम्बेडकर ने भारत की सामाजिक राजनैतिक विचारों की पृष्ठभूमि चिन्तन एवं जीवन पद्धति को गहरे स्तर तक प्रभावित किया है। सदियों से भारतीय समाज मनुस्मृति की व्यवस्थाओं पर आधारित एक विशेष मानसिकता से सम्बद्ध सामाजिक और राजनीतिक विधानों से नियन्त्रित होता रहा है। आधुनिक युग में अम्बेडकर ने मनुस्मृति पर आधारित श्रेणीबद्ध असमानता के सिद्धांत को कड़ी चुनौती दी व वर्ण एवं जाति पर आधारित सामाजिक और राजनीतिक विधानों के प्रति खुली बगावत की। सदियों से प्रचलन में रही वर्ण–व्यवस्था भारतीय समाज में संस्कार के रूप में रच–बस चुकी थी। अम्बेडकर ने आधुनिक जीवन–मूल्यों से प्रभावित होकर परम्परागत भारतीय समाज की अमानवीय मान्यताओं, जन्म के आधार पर मानव मात्र का विभाजन, उच्च वर्गों के विशेषाधिकार एवं निम्न वर्गों की निर्योग्यताओं को अस्वीकार करके मानवमात्र के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षणिक और सांस्कृतिक अधिकारों की वकालत कर एक ऐसे भय, भेद एवं शोषण–मुक्त समाज पर आधारित होगा। अपने क्रान्तिकारी विचारों के द्वारा उन्होंने परम्परागत समाज द्वारा स्थापित 'वाद' पर करारा आघात करके 'प्रतिवाद' को जन्म दिया।

समाज मे परिव्याप्त जाति–प्रथा के जहरीले विष ने उनके प्रारम्भिक छात्र–जीवन कलुषित कर दिया था। छात्र–जीवन के प्रारम्भिक दिनों में मिली मर्मान्तक पीड़ा और वेदना ने उनके अन्दर क्षोभ और कड़वाहट उत्पन्न कर दी थी। उनका सम्पूर्ण जीवन–दर्शन इसी पीड़ा, वेदना और क्षोभ की मुखर अभिव्यक्ति है। सन् 1900 में सतारा के सरकारी स्कूल में प्रवेश लेने के बाद उन्होंने प्राथमिक शिक्षा स्कूल के दरवाजे के बाहर बैठकर ग्रहण की थी। अछूत होने के कारण उन्हें प्राथमिक शिक्षा स्कूल के दरवाजे के बाहर बैठकर ग्रहण की थी। अछूत होने के कारण उन्हें संस्कृत नहीं पढ़ने दी गई, इस कारण उन्हें हाई स्कूल में दूसरी भाषा के रूप में फारसी लेनी पड़ी थी। बड़ौदा के महाराजा सयाजी राव गायकवाड़ ने उन्हें उच्च शिक्षा हेतु एक विदेशी छात्रवृत्ति प्रदान की। अमेरिका और ब्रिटेन से उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद महाराजा बड़ौदा ने उन्हें सन् 1917 में सैनिक सचिव नियुक्त किया। परन्तु जातीय तिरस्कार के चलते, वे इस पद पर अधिक दिन कार्य नहीं कर सके और अन्ततः उन्होंने इस पद से त्याग पत्र दे दिया। सन् 1918 में वे बम्बई के सिडनहम कॉलेज में राजनीतिक अर्थशास्त्र के प्राध्यापक नियुक्त हुए।

वर्णगत एवं जातिगत विभेदों और तिरस्कार के कारण अम्बेडकर को जन्म से लेकर जीवन के प्रत्येक क्रम पर अपमानित होना पड़ा। अम्बेडकर जैस सुयोग्य व्यक्ति को मिली मर्मान्तक पीड़ा वर्ण–व्यवस्था के उस छद्म आवरण को बेनकाब करती है, जिसके प्रचारक गुण एवं कर्म को वर्ण–व्यवस्था का आधार बताकर उसका गुणगान किया करते थे। अध्ययनकाल के दौरान उन्हें अमेरिका की जीवनशैली, स्वतन्त्रता, मानव–मूल्यों और उदार व्यवहार ने काफी प्रभावित किया था। भारतीय समाज में व्याप्त आदमी–आदमी के बीच की दूरी ने उनके अन्तःमन को कसोटना शुरू कर दिया। अतः पीड़ित और शोषित दलित वर्ग को समानता का दर्जा दिलाने के लिए सन् 1920 में उन्होंने मराठी भाषा में

(गूंगों का नेता) नामक समाचार–पत्र का प्रकाशन किया। 'मूकनायक' के प्रथम अंक में अम्बेडकर ने भारत को अछूतों एवं असमानता का घर निरूपित करते हुए लिखा कि ''भारत को स्वतन्त्र होने से पूर्व आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक आदि क्षेत्रों में समानता स्थापित करने का प्रयास करना चाहिए। बिना उसके राजनीतिक आजादी का अर्थ होगा–सत्ता का स्थानान्तरण। अर्थात् उस ब्राह्मण वर्ग के हाथ में सत्ता का आ जाना होगा, जिसके कारण अछूत वर्ग हिन्दू होते हुए भी अपमानित, उपेक्षित और घृणित जीवन जी रहा है। वही वर्ग–सत्ता में आ जायेगा तो निश्चय ही अछूतों के जीवन में स्थायी अभिशाप कुंडली मारकर बैठ जाएगा। जब तक अछूतों के लिए मौलिक अधिकारों की गारण्टी नहीं होगी, तब तक स्वराज्य से कोई लाभ नहीं हो सकेगा।''

सन् 1924 में उन्होंने दलितों के बहु–आयामी उत्थान के लिए 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' की स्थापना की। अम्बेडकर की प्रेरणा से सन् 1920 में ही बहिष्कृत हितकारिणी सभा (बहिस) की स्थापना हो गई थी, लेकिन चार वर्ष तक यह निष्क्रिय बनी रही। सन् 1924 में अम्बेडकर ने इसे पुनर्जीवन प्रदान कर प्रभावी तौर पर स्थापित किया। 'बहिस' का नारा था– शिक्षा, आन्दोलन और संगठन। संस्था के लक्ष्य के बारे में अम्बेडकर ने कहा कि ''जागृति के बिना बहिष्कृत समाज की उन्नति नहीं हो सकती। यह उसकी उन्नति की प्रथम अनिवार्यता है। प्रगति की दिशा में अग्रसर होने से पहले उस समुदाय में चेतना का संचार आवश्यक है। किसी ने सही कहा है कि दरिद्र अपनी दरिद्रता से विकलांग तो हो जाते हैं परन्तु उनके मार्ग में मुख्य बाधा है– उनकी अपनी अकर्मण्यता और उदासीनता। अपनी इस अकर्मण्यता और उदासीनता पर विजय पाने के लिए जरूरी है कि उनमें अपने पर हो रहे अन्याय के विरूद्ध तीव्र आक्रोश हो। इसके बिना वे अपनी प्रगति के पथ की बाधाओं को जीत नहीं सकते। एक ओर बाधाएं हटाई जायें तो इसके साथ ही साथ दूसरी ओर उनकी समृद्धि के अनुसार परिस्थितियां बनाई जाएं।'' दलितों के अन्दर शिक्षा का प्रचार–प्रसार, पुस्तकालयों, छात्रावासों, सामाजिक केन्द्रों की स्थापना, आर्थिक एवं कृषि सुधार, रोजगार–परक विद्यालयों का संचालन एवं सरकारी माध्यम से दलितों की विभिन्न समस्याओं के समाधान के प्रयास 'बहिस' के प्रमुख कार्यक्रम थे।

सन् 1927 में अम्बेडकर बम्बई विधान परिषद् के सदस्य नामांकित किए गए। इसी वर्ष उन्होंने प्रत्येक भारतीय को धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक स्वतन्त्रता दिलाने के उद्देश्य से 'बहिष्कृत भारत' नामक मराठी पत्रिका का प्रकाशन किया। सन् 1927 में ही अम्बेडकर ने महाड़ में पानी जैसे प्राकृतिक संसाधन को अछूतों के लिए निषिद्ध किए जाने के खिलाफ अहिंसक सत्याग्रह किया और चवदार तालाब की ओर 10,000 सत्याग्रहों स्त्री–पुरुषों के साथ प्रयाण करके सामूहिक रूप से तालाब पानी। 25 दिसम्बर, 1927 को महाड़ के द्वितीय सम्मेलन में उनकी अगुवाई में 'मनुस्मृति' को चिता पर रखकर सार्वजनिक रूप से जलाया गया। उक्त दोनों घटनाएं ऐतिहासिक सिद्ध हुई। धनंजय कीर ने लिखा है कि ''यह कार्य मार्टिन लूथर के बाद धरती पर स्वार्थी धर्म–स्थितियों, परम्परा–उन्मादियों तथा परिवर्तन–विरोधियों के प्रति महान देवद्रोही (अपवित्र) धमाकों में से एक था। फलतः 25 दिसम्बर, 1927 के परिपत्रों में एक लाल पत्र दिवस है, क्योंकि उसी दिन नये विधान की माँग की, जिससे लोगों के जीवन को अनुशासित किया जा सके। इस प्रकार महाड़ भारत का बिटिन वर्ग बन गए थे और उन्हें हिन्दुओं के मूर्ति–भंजक और धर्म–विनाशक के रूप में देखा गया था। अम्बेडकर का विचार था कि मनुस्मृति से पहले भी जाति–प्रथा अस्तित्व में थी। मनुस्मृति ने जाति–प्रथा को संहिताबद्ध स्वरूप प्रदान किया और दलितों पर धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक दासता थोप दी।

सन् 1928 में अम्बेडकर ने 'महार वतन प्रथा' के खिलाफ संघर्ष प्रारम्भ किया। इसी वर्ष उन्हें साइमन कमीशन के साथ कम करने के लिए बम्बई प्रदेश समिति का सदस्य चुना गया। अम्बेडकर ने भारत की भावी संवैधानिक व्यवस्था में दलितों के हितों और राजनीतिक अधिकारों को शामिल कराने के उद्देश्य से साइमन कमीशन (सरकारी तौर पर इंडियन स्टेट्यूटरी कमीशन) के सम्मुख ज्ञापन प्रस्तुत किया। इस ज्ञापन के प्रमुख बिन्दु इस प्रकार थे –

1. बम्बई प्रेसीडेन्सी में दलितों की जनसंख्या को काफी कम दर्शाया गया है।
2. दलितों को कुल जनसंख्या के 10.8 प्रतिशत के हिसाब से बम्बई विधान परिषद् में सीटें मिलनी चाहिए।
3. दलित वर्गों को अल्पसंख्यक होने के कारण अधिक प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए।
4. दलितों के प्रतिनिधि सरकार की ओर से मनोनीत होने की बजाय निर्वाचित होने चाहिए।
5. मतदाता बनने के लिए निर्धारित शर्तें घटा देना चाहिए।
6. यदि वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचन होते हैं तो पृथक् साम्प्रदायिक निर्वाचक मण्डल की जरूरत नहीं है, लेकिन दलितों के लिए अलग से सीटें आरक्षित होनी चाहिए।
7. दलितों के लिए शिक्षा, रोजगार और स्थानीय निकायों में विशेष सुविधाओं ककी गारंटी दी जानी चाहिए।
8. इस प्रकार की विशेष गारण्टी न्यायोचित है क्योंकि अधिक प्रतिनिधित्व के बावजूद समाज के दलित, सवर्णों की दया पर ही निर्भर रहेंगे।

उल्लेखनीय है कि अम्बेडकर ने इससे पूर्व सन् 1919 में मोण्ट–फोर्ड सुधारों के सन्दर्भ में गठित साउथब्रो कमीशन के सामने दलितों के लिए जनसंख्या के आधार पर पृथक् निर्वाचन मण्डल की व्यवस्था, सुरक्षित स्थान और दलितों के प्रतिनिधि चुनने का अधिकार केवल दलित वर्गों को देने की माँग की थी। साउथब्रो कमीशन के सामने ''अम्बेडकर का आग्रह स्वीकार्य नहीं हुआ। आयोग ने कांग्रेस–लीग की बात स्वीकार करते हुए मुसलमानों के लिए पृथक् निर्वाचन स्वीकार किया, लेकिन साथ–साथ दलितों के दो–दो प्रतिनिधियों को धारा सभाओं और केन्द्रीय सभा में मनोनीत करने की बात स्वीकार कर ली। यह डॉ. अम्बेडकर की जीत का प्रथम सोपान है।''

यद्यपि अम्बेडकर ने साइमन कमीशन के समक्ष दिए ज्ञापन में वयस्क मताधिकार मिल जाने की स्थिति में संयुक्त मण्डल की व्यवस्था को स्वीकार किया था लेकिन कमीशन के सम्मुख दिए साक्ष्य में उन्होंने दलितों को हिन्दुओं से पृथक् अल्पसंख्यक समुदाय मानने पर जोर दिया। अम्बेडकर ने इस अवसर पर कहा कि वस्तुतः हिन्दुओं और दलितों के

बीच कोई तारतम्य नहीं है इसलिए मुसलमान अल्पसंख्यकों को दिए गए प्रतिनिधित्व के आधार पर दलितों को प्रतिनिधित्व दिया जाये। वयस्क मताधिकार दिए जाने की स्थिति में दलितों को आरक्षित सीटें प्रदान की जायें। यह पहला अवसर था, जब अम्बेडकर ने अस्पृश्यों को हिन्दुओं से अलग अल्पसंख्यक समुदाय मानकर उनके लिए पृथक् निर्वाचक मण्डल की माँग की।''

साइमन कमीशन की असफलता के बाद स्वराज्य संविधान के प्रारूप निर्माण के लिए गठित मोतीलाल नेहरू समिति के प्रतिवेदन में विधान मण्डलों में दलितों के प्रतिनिधित्व के लिए कोई विशेष प्रावधान नहीं किया गया था। अम्बेडकर ने नेहरू प्रतिवेदन पर अपनी प्रतिक्रिया में कहा कि ''यह रिपोर्ट उच्च जाति के सामाजिक वर्चस्व को ताकतवार बनाने और ब्राह्मणवादी व्यवस्था को संजीवनी देने के लिए तैयार की गई है।

सन् 1930 में उन्होंने 15,000 स्त्री–पुरुषों के साथ नासिक के कालाराम मंदिर में प्रवेश के लिए 'मंदिर–प्रवेश' नामक आन्दोलन शुरू किया। अम्बेडकर का विश्वास था कि इस प्रकार सत्याग्रह दलितों के अन्य मंदिरों में प्रवेश के लिए सहायक सिद्ध होगा एवं इससे हिन्दुओं का हृदय–परिवर्तन का एक प्रयास है। अम्बेडकर का मत था कि ''वह देश जो दूसरों पर राज्य करता है, ठीक नहीं है। तब कोई वर्ग, जाति, धर्म आदि किसी भी आधार पर जो दूसरे वर्ग पर राज्य करता हो, वह भी ठीक नहीं माना जायेगा। प्रत्येक व्यक्ति को अपने विकास के लिए पूरी सुविधाएं मिलनी चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को समान अवसर होने चाहिए। सभी के विकास से देश व जाति का विकास सम्भव है।'' उनका विश्वास था कि सामाजिक समानता के अभाव में किसी भी प्रकार का विकास सम्भव नहीं है। इसी सामाजिक समानता के उद्देश्य से वे शोषित और पीड़ित दलितों के संरक्षण के पक्षधर थे।

सन् 1930 में अम्बेडकर ने दलितों के प्रतिनिधि के रूप में लन्दन में आयोजित प्रथम गोलमेज सम्मेलन में भाग लिया। इस सम्मेलन में उन्होंने दलितों के लिए समान नागरिकता के अधिकार, अधिकारों के मुक्त उपभोग, नागरिकता के नियम के उल्लंघन पर दण्ड का प्रावधान, दलितों के सामाजिक बहिष्कार एवं बहिष्कार की धमकी पर दण्ड का प्रावधान, भेदभाव के विरूद्ध संरक्षण, दलितों को विधान सभाओं एवं सरकारी नौकरियों में समुचित प्रतिनिधित्व, पक्षपातपूर्ण कार्यवाहियों के खिलाफ संरक्षण, विशेष विभागीय सुरक्षा की व्यवस्था तथा दलितों को मन्त्रिमण्डल में समुचित प्रतिनिधित्व जैसी माँगों की पुरजोर वकालत की। अम्बेडकर ने लन्दन में हुई समस्त गोलमेज परिषदों में भाग लिया। उन्होंने द्वितीय गोलमेज परिषद् (1931) में भी दलितों के पृथक् निर्वाचक मण्डल और प्रतिनिधित्व की पैरवी की। भारतीय नेताओं में सर्वसम्मति के अभाव के चलते सन् 1932 में ब्रिटिश सरकार ने 'कम्यूनल अवार्ड' (साम्प्रदायिक पंचाट) की घोषणा की। इसके तहत दलितों को अल्पसंख्यक मानकर उन्हें पृथक् निर्वाचन का अधिकार प्रदान किया गया। दलितों के लिए सुरक्षित स्थानों के अतिरिक्त सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों से भी चुनाव लड़ने की छूट प्रदान की गई।

अम्बेडकर के अनुसार – ''इस अवार्ड से दलितों को दोहरा अधिकार मिला है। प्रथमतः वे सुनिश्चित सीटों की आरक्षित व्यवस्था में चुनकर आयेंगे और दूसरा, दो वोट का अधिकार, एक आरक्षित सीट के लिए, दूसरा अनारक्षित सीट के लिए।''

कम्यूनल अवार्ड की घोषणा के बाद गाँधी ने संकल्प लिया कि वे अपने प्राणों की कीमत पर भी साम्प्रदायिक पंचाट का विरोध करेंगे। गाँधी सम्पूर्ण साम्प्रदायिक योजना के खिलाफ थे, परन्तु उन्हें सर्वाधिक आपत्ति दलितों को साम्प्रदायिक आधार पर शेष हिन्दुओं से विभक्त करने की नीति के प्रति थी। गाँधी ने साम्प्रदायिक योजना के खिलाफ पूना को यरवदा जेल में आमरण अनशन शुरू कर दिया। उनके अनशन से सारे देश का राजनीतिक वातावरण उत्तेजित हो गया। अन्ततः इस समस्या का समाधान गाँधी और अम्बेडकर के बीच ऐतिहासिक समझौते से हुआ। इस समझौते को :पूना–पैक्ट' या 'यरवदा करार' के नाम से जाना जाता है। इस समझौते के अन्तर्गत दलितों को 'कम्यूनल अवार्ड' के एवज में पहली बार राजनीतिक आरक्षण प्रदान किया गया। यह अम्बेडकर के प्रयासों एवं प्रभाव का ही परिणाम था कि सदियों से जातीय निर्योग्यताओं के शिकार दलितों का इतिहास में पहली बार स्वतन्त्र एवं सम्मानपूर्ण अस्तित्व स्वीकार किया गया।

महाड़ एवं नासिक के सत्याग्रह के दौरान कट्टरपंथी सवर्ण हिन्दुओं की उग्र–प्रतिक्रियाओं और प्रताड़नाओं ने अम्बेडकर को यह सोचने के लिए मजबूर कर दिया कि वे हिन्दू धर्म में बने रहें अथवा त्याग दें। ''वह हिन्दू धर्म में दलित वर्ग के जीवन–अस्तित्व और जीवन–सम्मान और गुंजाइश का आभास नहीं पा रहे थे। उनकी दृष्टि में मनुष्य के लिए धर्म अपरिहार्य था। उससे मनुष्य को अन्तर्दृष्टि और जीने का संबल मिलता है। बिना धर्म के मनुष्य की स्थिति डांवाडोल ही बनी रहेगी। उनके मन में निरन्तर यह प्रश्न जोर मार रहा था कि हिन्दू धर्म के अलावा वे कौनसा धर्म स्वीकार करें, जिससे दलित वर्ग की मानसिक स्थिति सवर्ण वर्ण के समानान्तर हो सके।'' सन् 1935 में येवला में आयोजित दलित सम्मेलन में अम्बेडकर ने एलान किया कि ''मेरा दुर्भाग्य है कि मैं बड़ी गम्भीरता से कहना चाहता हूँ कि मैं एक हिन्दू के रूप में मरूँगा नहीं। इसी घोषणा के अनुपालन में उन्होंने 1956 में, नागपुर में अपने हजारों अनुयायियों के साथ बौद्ध धर्म को अंगीकार किया था।

सन् 1936 में अम्बेडकर ने दलितों की सशक्त राजनीतिक अभिव्यक्ति के उद्देश्य से 'इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी' की स्थापना की। समसामयिक परिस्थितियों में वे दलितों और अन्य जातियों के बीच राजनीतिक सहयोग की आवश्यकता महसूस करने लगे थे इसलिए उन्होंने अपनी पार्टी का नाम जाति–सूचक की बजाय वर्ग–सूचक रखा। उन्होंने स्पष्ट किया कि ''पार्टी श्रमिकों का संगठन है क्योंकि इसका कार्यक्रम मुख्यतः श्रमिक वर्ग का कल्याण है। इसलिए दलित स्थान पर लेबर शब्द को रखा गया है क्योंकि श्रमिक में दलित भी शामिल हैं।'' इस पार्टी ने दलितों और श्रमिकों के उत्थान के लिए उल्लेखनीय कार्य किए।

सन् 1942 में अम्बेडकर को वाइसराय की कौंसिल में श्रम सदस्य के रूप में मनोनीत किया गया। श्रम सदस्य की हैसियत से उन्होंने श्रमिकों की सुरक्षा और गर्भवती महिलाओं के लिए तीन माह के प्रसूति अवकाश के कानूनी

प्रावधान निर्धारित कर श्रमिकों के लिए सुधारात्मक कार्य किए। इसी वर्ष उन्होंने दलितों की लोकतान्त्रिक आकांक्षाओं को अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए 'शेड्यूल्ड कास्टस फेडरेशन' की स्थापना की व दलितों को शिक्षा, संगठन और संघर्ष का नारा दिया। 15 अगस्त, 1947 को जब भारत स्वतन्त्र हुआ, तब उन्हें स्वतन्त्र भारत का प्रथम कानून मंत्री नियुक्त किया गया। इसी वर्ष उन्हें भारत के संविधान का निर्माण करने वाली संविधान सभा की प्रारूप समिति का अध्यक्ष बनाया गया। आधुनिक भारत के संविधान निर्माण में उनके अप्रतिम योगदान के कारण उन्हें संविधान निर्माता कहा जाता है।

सन् 1951 में अम्बेडकर ने 'हिन्दू कोड विल' पर हुए विवाद के कारण नेहरू– मन्त्रिमण्डल से त्याग–पत्र दे दिया। 'हिन्दू कोड विल' पर कानून मंत्री के रूप में उन्होंने कहा था कि ''हिन्दू कोड विल इस देश में व्यवस्थापिका द्वारा हाथ में लिया गया सबसे महत्वपूर्ण समाज सुधार है।'' कट्टरपंथियों के पुरजोर विरोध के कारण 'हिन्दू कोड विल' एकमुश्त रूप में पारित नहीं हो सका। अपने जीवन के अन्तिम चरण में अम्बेडकर बौद्ध धर्म के अनुयायी बन गए। एक कबीरपंथी परिवार में जन्म लेने से लेकर बौद्ध धर्म के मानवता के कल्याण के लिए समर्पित रहा। उनके विचार–दर्शन को किसी जाति, धर्म और देश की सीमाओं में नही बाँधा जा सकता वरन् उनका दर्शन तो सम्पूर्ण विश्व पर लागू होता है। जहाँ पर मानव मात्र शोषण और उत्पीड़न का शिकार है। अम्बेडकर को अर्पित श्रद्धांजलि में जवाहरलाल नेहरू ने बेहद सटीक शब्दों में उनके जीवन–दर्शन को रेखांकित करते हुए कहा था कि ''डॉ. अम्बेडकर ने आत्म–सृष्टि के खिलाफ वे सतत् संघर्षरत रहे। यद्यपि वे निर्ममतापूर्वक बोलते थे लेकिन किसी व्यक्ति के विपरीत उन्होंने अशालीन वाणी का प्रयोग भी नहीं किया और जीवन–भर वे समता, स्वतन्त्रता और भ्रातृत्व के आदर्शों के लिए विद्रोह करते रहे। वे महान राष्ट्वादी और विवेकशील महापुरुष थे।''

अम्बेडकर ''वास्तविक अर्थों में एक बहुआयामी व्यक्तित्व के स्वामी थे।'' उन्होंने मानव–जीवन से सम्बद्ध समस्त पहलुओं पर अपना स्पष्ट दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। अम्बेडकर समाज वैज्ञानिक नहीं थे वरन् वह अपने सामाजिक परिवर्तन चक्र के माध्यम से पीड़ित और शोषित वर्ग की समस्याओं का निवारण करना था, इसलिए उन्होंने अपने दृष्टिकोण को न तो समाजशास्त्रीय शब्दावली में प्रस्तुत किया और न ही सामाजिक व्यवस्था के किसी नवीन सिद्धान्त को प्रस्तुत करने का प्रयास किया और अपने चिन्तन के द्वारा उसके समाधान की व्याख्या की। उनका सामाजिक चिन्तन उस पीड़ा और वेदना की मुखर अभिव्यक्ति है, जिसे उन्होंने अपने जीवन में झेला था।

अम्बेडकर ने जातीय दम्भ की समस्त मुद्राओं की यातनाओं को देखा एवं भोगा था। अतः वे सामाजिक जीवन से जातिभेद, अस्पृश्यता और छुआछूत के कलंक को मिटाना चाहते थे। उनकी मान्यता थी कि जाति व्यवस्था के रहते हिन्दू समाज संगठित एवं मजबूत नहीं बन सकता। उन्होंने अपने विचार, कार्य एवं व्यवहार का प्रत्येक क्षण दलितों के उत्थान एवं चेतना के लिए समर्पित किया। अपनी पुस्तक 'एनिहिलेशन ऑफ कास्ट' में उन्होंने लिखा है कि ''अब तक हिन्दू समाज में जो सुधारक पैदा हुए, उन्होंने बाल–विवाह, सतीप्रथा, विधवा विवाह–निषेध आदि कुप्रथाओं के खिलाफ तो आवाज उठाई, परन्तु जाति–व्यवस्था के समूल उन्मूलन की सार्थक पहल किसी ने नहीं की।'' आधुनिक युग में आर्यसमाजी सुधारकों ने वर्ण का आधार जन्म के स्थान पर कर्म को निरूपित कर चुतर्वर्णीय समाज व्यवस्था के प्रारूप को प्रस्तुत किया। गाँधी ने भी कोई मौलिक परिवर्तन किए बिना अछूतों या दलितों को हरिजन नाम दिया, परन्तु अम्बेडकर उक्त दोनों ही व्यवस्थाओं से संतुष्ट नहीं थे। उनका विचार था कि जब तक हिन्दू समाज में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र नामों का अस्तित्व बना रहेगा, तब तक लोगों में ऊँच–नीच का भाव बना रहेगा। इसी प्रकार हरिजन नाम देने से भी अछूतों की स्थिति पर कोई फर्क पड़ने वाला नहीं है और न ही इस संज्ञा से अछूत होने का निशान या कलंक मिटने वाला है।

अम्बेडकर ने उपलब्ध साहित्य के आधार पर उन ऐतिहासिक तथ्यों व सामाजिक कारणों को खोजने का प्रयास किय जिनके कारण वर्णाश्रम व्यवस्था एवं जाति–प्रथा ने इतना कठोर रूप धारण किया। 'हू वर द शूद्राज : हाउ दे केम टू बी द फोर्थ वर्णा इन द इण्डो–आर्यन सोसायटी' नाम पुस्तक में उन्होंने इस तथ्य को खोजने की कोशिश की, कि शूद्र वास्तव में कौन थे और किस प्रकार वे आर्यों की समाज व्यवस्था में इतने निम्नतम स्तर तक पहुँच गए। अम्बेडकर ने वैदिक और पौराणिक साहित्य के आधार एवं विभिन्न सूक्तों में वर्णित मत–भिन्नता का हवाला देते हुए इस मान्यता को प्रतिपादित किया कि शूद्र आर्य थे। वे इक्ष्वाकु वंश के सूर्यवंशी क्षत्रिय थे, बाद में ब्राह्मणों द्वारा दुर्भावनावश उनका उपनयन संस्कार बन्द कर दिए जाने के कारण वे इस पतित और दयनीय अवस्था में पहुँच गए। अम्बेडकर के मतानुसार– प्रारम्भिक अवस्था में, समाज में तीन वर्ण थे – ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य। सामाजिक और धार्मिक वर्चस्व के प्रश्न पर इन वर्णों में परस्पर संघर्ष रहता था। वेणु, पुरूरवा, से नीं पटती थी और विशेषतः सुदास आदि समस्त राजा आर्य थे। इन सभी राजाओं की ब्राह्मणों से नहीं पटती थी और विशेषतः सुदास की ब्राह्मणों से अधिक लड़ाई थी। शूद्र सुदास के वंशज थे। विश्वामित्र क्षत्रिय थे व सुदास के पुरोहित थे। विश्वामित्र एवं वशिष्ट के बीच झगड़ा था। चूँकि सुदास वशिष्ठ की बजाय विश्वामित्र का अधिक आदर करते थे, इसलिए ब्राह्मणों के द्वेषवश सुदास और उनके वंशजों को शूद्र घोषित कर दिया और उनका 'उपनयन' संस्कार करना बन्द कर दिया। इस प्रकार वे कालान्तर में पतन के शिकार होकर चौथे वर्ण में पहुँच गए।

'द अनटचेबल्स' नामक पुस्तक में अम्बेडकर ने भारत की दलित या अछूत जातियों को विश्व की अपेक्षित मानवता की मिसाल कहा है। उनका मत है कि जाति–व्यवस्था व अस्पृश्यता के मूल में ऐतिहासिक एवं सामाजिक संघर्षों की महती भूमिका रही है।'कास्ट्स इन इंडिया : द मैकेनिज्म, जैनेसिस एण्ड डेवलपमेन्ट' नामक लघु–पुस्तिका में उन्होंने जाति की रचना, उसकी निरन्तरता, उत्पत्ति एवं उसके प्रचार–प्रसार की व्याख्या की है उनका मत है कि सभ्यता के एक स्तर पर ब्राह्मणों ने अपने आपको श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिए अन्य समूहों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध बन्द कर दिए। उनकी देखादेखी में अन्य समूहों ने

भी ऐसा ही किया और परिणामस्वरूप जाति–व्यवस्था का उदय हो गया।

'एनिहिलेशन ऑफ कास्ट' नामक पुस्तिका में, अम्बेडकर ने चतुर्वणीय सामाजिक व्यवस्था को समाप्त करने की पुरजोर वकालत की। उन्होंने जाति–प्रथा की खामियों को उजागर कर एक ऐसी समाज व्यवस्था के संगठन पर बल दिया जो तर्क पर आधारित हो। उन्होंने लिखा कि मैं बिना किसी संदेह के यह कह सकता हूँ कि समाज व्यवस्था में परिवर्तन के बिना प्रगति सम्भव नहीं है। इस परिवर्तन को किए बिना, समाज को रक्षा या अभिक्रमण के लिए भी तैयार नहीं किया जा सकेगा। जाति–प्रथा की बुनियाद पर जो भी निर्माण होगा, उसमें दरारें उत्पन्न हो जायेंगी और वह कभी पूर्ण नहीं हो सकेगा।

जाति–प्रथा एवं अस्पृश्यता के सन्दर्भ में अम्बेडकर की उक्त व्याख्याओं को भले ही समाज वैज्ञानिक मान्यता प्राप्त न हो, पर इससे उसका महत्व कम नहीं होता। अपमान, असम्मान और तिरस्कार के चरणों से गुजरते हुए अम्बेडकर ने जाति–प्रथा एवं अस्पृश्यता को समूलतः नष्ट करने के लिए और हिन्दू–समाज की बेहतरी के लिए कतिपय मौलिक सुधारों की आवश्यकता पर बल दिया। यह सुधार है –

सामाजिक व्यवस्था जाति के स्थान पर कर्म पर आधारित होनी चाहिए।

1. अस्पृश्यता पूर्णतः समाप्त होनी चाहिए।
2. हिन्दू धर्म का एक प्रामाणिक ग्रन्थ होना चाहिए जिसे समस्त हिन्दू स्वीकार करें।
3. परम्परागत पुरोहिताई की व्यवस्था समाप्त होनी चाहिए और राज्य द्वारा आयोजित पुरोहिताई की परीक्षा पास करने वाले ही पुरोहित के योग्य समझे जायें।
4. सामाजिक संरचना में व्यक्ति की केन्द्रीय स्थिति होनी चाहिए।
5. सम्पूर्ण समाज परम्परागत श्रेणीबद्ध असमानता के स्थान पर न्याय, स्वन्तत्रता, समानता एवं बंधुत्व के आधार पर संगठित होना चाहिए।

अम्बेडकर ने दलितों की समस्याओं के समाधान के सन्दर्भ में कुछ प्रमुख सुझावों को प्रस्तुत किया। प्रमुख सुझाव हैं –

1. दलितों का शहरी क्षेत्रों में प्रवास।
2. अपवित्रकारी कार्यो की बजाय लौकिक व्यवसाय अपनाना।
3. दलितों का एक राजनीतिक इकाई के रूप में संगठित होना।
4. राजनीतिक शक्ति प्राप्त करना।
5. संवैधानिक मार्ग का अनुकरण।
6. स्वावलम्बन एवं स्वप्रयास।
7. संघर्ष, समझौता एवं सौदेबाजी की रणनीति अख्तियार करना।
8. धम्म दीक्षा।

सामान्यतः अम्बेडकर को मूलतः परिवर्तनवादी के रूप में देखा जाता है, परन्तु यह प्रतीत होता है। वे मूलतः सुधारवादी थे किन्तु बाद में पूर्णतः परिवर्तनवादी हो गए। गाँधी की भाँति उनके भी राजनीतिक जीवन के पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध में वैचारिक परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है। प्राम्भिक समय में अम्बेडकर ने 'हिन्दुत्व' के ढांचे के अन्तर्गत सुधारों पर जोर दिया। उन्हें विश्वास था कि सवर्ण हिन्दू अस्पृश्यता के खात्मे, सामाजिक विभेद और दलित समस्याओं के समाधान के लिए आगे आएंगे। अम्बेडकर का यह भी विश्वास था कि यदि ब्राह्मण अस्पृश्यता उन्मूलन का प्रयास करेंगे तो सामान्यजन निश्चित रूप से इस दिशा में उनका अनुसरण करेंगे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वे एक हिन्दू संगठन की आवश्यकता भी महसूस करते थे। उक्त 'हिन्दू संगठन' की आकांक्षा के कारण उन्होंने सवर्ण हिन्दुओं एवं दलितों के 'संयुक्त गणेशोत्सव' और 'सत्यनारायण पूजा' जैसे धार्मिक कार्यक्रम प्रारम्भ किए। एक व्यापक हिन्दू संगठन की स्थापना के लिए वे हिन्दू महासभा और शंकराचार्य के सहयोग के भी आकांक्षी रहे। महाड़ के द्वितीय सम्मेलन में मनुस्मृति को सार्वजनिक तौर पर जलाये जाने की घटना तक अम्बेडकर हार्दिक रूप से हिन्दू ही थे। ''उनका उद्देश्य समाज–प्रबोधन था, जातिगत विद्वेष फैलाना नहीं। द्वितीय महाड़ परिषद् के अवसर पर मनुस्मृति जलाई गई। डॉ. अम्बेडकर ने सोच–समझकर यह कार्य गंगाधर नीलकण्ठ सहस्रबुद्धे और छह साधुओं को सौंपा। सहस्रबुद्धे चितपावन ब्राह्मण थे और छहों साधु जन्म से अस्पृश्य थे। मनुस्मृति जलाने की घटना की ऊँची जातियों में, विशेषकर ब्राह्मणों में तीखी प्रतिक्रिया हुई। अगर यही काम अस्पृश्य अथवा शूद्र के हाथों होता तो उच्च वर्णियों की प्रतिक्रिया और भी उग्र होती।'' मनुस्मृति जलाने की घटना तक हिन्दू धर्म से उनका मोहभंग नहीं हुआ था। उन्होंने कहा कि ''यह कहा जाता है कि वर्ण–व्यवस्था हिन्दू धर्म का आधार है, लेकिन मैं यह नहीं मानता। मैं यह भी नहीं मानता कि चातुर्वर्ण्य व्यवस्था के बाहर के हिन्दू अस्पृश्य हैं। ऐसे भी हिन्दू हैं जो वेदों को नहीं मानते। मैं भगवद्गीता के अलावा किसी भी पुस्तक को आदरणीय या प्रमाण नहीं मानता। यद्यपि मैं वेदों को प्रमाण नहीं मानता, परन्तु मैं अपने को सनातनी हिन्दू मानता हूँ।''

अम्बेडकर द्वारा वेदों को प्रामाणिक न मानना और वर्ण–व्यवस्था के प्रति उनके विरोध को हिन्दू धर्म के विध्वंशक के रूप में देखना उचित प्रतीत नहीं होता। वे हिन्दू धर्म को तर्क पर आधारित करना चाहते थे इसलिए उन्होंने वर्ण–व्यवस्था के अतार्किक यंत्रवाद का विरोध किया और श्रम विभाजन के सिद्धान्त को श्रमिकों की अस्वाभाविक रूचियों पर आधारित सिद्ध किया। अम्बेडकर का मत है कि ''यदि कोई हिन्दू अपनी जाति के लिए निर्धारित पेशे के अलावा नए पेशे को अपनाने की बजाय भूखा मरता दिखाई देता है, तो उसका कारण जाति–प्रथा की कठोरता ही है। पेशों के पुनर्समायोजन की छूट न देकर अधिकतर बेरोजगारी फैलाती है, जिसका सीधा कारण जाति–प्रथा है, जो हमारे देश में मौजूद है।''

अम्बेडकर नास्तिक नहीं थे वरन् गाँधी की भाँति उनका धर्म में गहन् विश्वास था। अम्बेडकर कार्ल मार्क्स की तरह धर्म को जनता के लिए अफीम नहीं मानते थे वरन् धर्म को वह समाज की नींव मानते थे। वे कानून की भूमिका को सीमित मानते थे क्योंकि कानून अल्पमत को ही अनुशासित रख पाता है, जबकि बहुमत को अनुशासित रखने के लिए धार्मिक अनुमोदनों का सहारा लेना पड़ता है। अम्बेडकर की मान्यता थी कि चाहे कितने ही शक्तिशाली कानूनों का निर्माण क्यों न कर लिया जाए किन्तु वास्तविक धर्म की

स्थापना के बिना वांछित सामाजिक संरचना की स्थापना सम्भव नहीं हो सकती। विवेकानन्द की इस मान्यता कि ''भुखमरी से पीड़ित मनुष्य को धर्म का उपदेश देना कोरा उपहास है। भारत वह देश है, जहां दसियों लाख लोग महुआ का फूल खाकर रहते हैं और दस या बीस लाख साधू तथा एक करोड़ के लगभग ब्राह्मण इन लोगों का रक्त चूसते हैं। के समान ही अम्बेडकर का मत था कि ''धर्म व्यक्ति के लिए होता है, व्यक्ति धर्म के लिए नहीं। भूखे व्यक्ति के लिए धर्म की तुलना में रोटी अधिक महत्वपूर्ण है। वेद–वेदान्त के उच्च दर्शन, स्वर्ग, नरक और पुनर्जन्म की कल्पनाएं तथा वर्णाश्रम धर्म उनके लिए हैं, जिन्हें जीवन में सब कुछ मिला है। जो भूखे और नंगे हैं जिनकी इस दशा के लिए उनका धर्म उत्तरदायी है, उन्हें धर्म से क्या लेना–देना। जो धर्म मानवता की इज्जत नहीं करता, वह धर्म नहीं है।'' वस्तुतः अम्बेडकर हिन्दुत्व का उन्मूलन करने की बजाय हिन्दुत्व के बुनियादी ढाँचे में सुधार करना चाहते थे। उन्होंने कहा कि ''ऐसे धार्मिक सिद्धान्त जो स्वतन्त्रता, समानता और भाईचारे के अनुरूप हों, उन्हें विदेश से लाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि इस प्रकार के सिद्धान्त उपनिषदों में वर्णित हैं। आप चाहें तो पूरा ढांचा बदले बिना कच्ची धातु की यथेष्ट कटाई–छटाई करके यह किया जा सकता है, जो मेरे कथन से अधिक है। इसका तात्पर्य है कि मनुष्य और चीजों के प्रति दृष्टिकोण तथा रवैये में पूरा बदलाव लाया जाये।''

अम्बेडकर हिन्दू धर्म में व्याप्त यथास्थितिवाद, दोषपूर्ण समाज रचना, वर्णाश्रम व्यवस्था और व्यक्ति के स्थान पर वर्ण की केन्द्रीय स्थिति को समापत कर, उसके स्थान पर एक तर्कसम्मत, विवेकसम्मत, और न्याय, समता, स्वतन्त्रता व भ्रातृत्व पर आधारित धर्म की स्थापना के पक्षधर थे। अम्बेडकर ने धर्म की जिन प्रमुख कसौटियों का निर्धारण किया, वे कसौटियाँ हैं –

1. धर्म तर्कसम्मत एवं विवेकसम्मत होना चाहिए।
2. धर्म को न्याय, समता, स्वतन्त्रता व भाईचारे की भावना को पैदा करने वाला होना चाहिए।
3. धर्म परलौकिक की बजाय इहलौकिक हो।
4. धर्म को दया, सहानुभूति, प्रेम एवं करूणा पर आधारित होना चाहिए।
5. धर्म दरिद्रता का पोषण और संरक्षण करने वाला न हो।
6. धर्म को सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक होना चाहिए।

अम्बेडकर मूलतः हिन्दू धर्म की खामियों को दूर करना चाहते थे ओर हिन्दुत्व को सवर्ण हिन्दुओं और दलितों के सम्मानपूर्ण सामंजस्य एवं सहभागिता पर आधारित करना चाहते थे। प्रारम्भिक समय में उनके कार्यो एवं विचारों से यह स्पष्टतः परिलक्षित होता है कि वे हिन्दू धर्म को व्यापक आधार पर संगठित करना चाहते थे। अपने अनुभवजन्य ज्ञान से उन्हें धर्म की महत्ता का अहसास थां समाजवादियों द्वारा आर्थिक कारकों एवं धन–सम्पत्ति को सत्ता और सामाजिक स्तर के निर्धारण का एकमात्र स्रोत मानने के विपरीत उनका विचार था कि ''किसी व्यक्ति का सामाजिक स्तर ही अक्सर शक्ति का स्रोत बन जाता है और उसके प्रभाव से उसका प्राधिकार प्रदर्शित होता है, जैसाकि महात्माओं का सामान्य व्यक्ति के ऊपर प्रभाव रहा है। भारत में लखपति लोग अकिंचन, साधुओं और फकीरों की आज्ञा क्यों मानते हैं? भारत में लाखों दरिद्र अपनी मामूली चीजों को भी, जो उनकी एकमात्र संपति होती है, बेचकर बनारस और मक्का क्यों जाते हैं? भारत के इतिहास में इस बात का चित्रण है कि धर्म, सत्ता का स्रोत है जहाँ पुजारी को सामान्य व्यक्ति से अधिक महत्व प्राप्त है और कभी–कभी तो यह प्रथम मजिस्ट्रेट से भी अधिक होता है।'' हिन्दू धर्म पर अम्बेडकर की टिप्पणियाँ विद्रोह की बजाय एक टीस की प्रतीक हैं। अम्बेडकर की इस मान्यता कि ''हिन्दू धर्म तब से प्रचार मूलक र्ध्मा नहीं रह गया, जब से हिन्दुओं में जाति–प्रथा का उद्‌गम हुआ। जाति–प्रथा धर्म–परिवर्तन नहीं होने देती। धर्म–परिवर्तन में सिर्फ यही समस्या नहीं होती कि नई धारणाएं और नये सिद्धान्त अपना लिए जाएं बल्कि दूसरी ओर सबसे बड़ी समस्या इसमे ंयह पैदा होती हे कि धर्म–परिवर्तित व्यक्ति को किस जाति में स्वीकार किया जाए?'' यह स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि वे हिन्दू सबसे बड़ी बाधा थी जाति–प्रथा। इस दृष्टि से अम्बेडकर की टिप्पणी को हिन्दू धर्म के प्रति विद्रोही समझे जाने की बजाय हिन्दू धर्म को व्यापक बनाए जाने की आकांक्षा में बाधक तत्वों के प्रति एक खीज समझना अधिक प्रासंगिक प्रतीत होता है। उन्होंने कहा कि ''मैं हिन्दू धर्म में एकता और समता चाहता हूँ। वह सिद्धान्त जिससे उच्च जाति के लोग विशेषाधिकारों का प्रयोग कर सकें और निम्न जाति के लोग गरीबी का अभिशाप ढोते रहें, यह मुझे नापसन्द है।''

अम्बेडकर हिन्दुओं को एकता के सूत्र में बांधने वाले तंतुओं की आवश्यकता महसूस करते थे। उनकी दृष्टि में ''हिन्दुओं में ऐसी कोई संघटनकारी शक्ति नहीं है, जो जाति–प्रथा द्वारा किए गए विखण्डन को समाप्त कर सके। लेकिन गैर–हिन्दुओं में ऐसे अनेक सुव्यवस्थित तन्तु हैं, जो उन्हें एकता के सूत्र में बांधते हैं।'' अम्बेडकर का विचार था कि किसी समाज की ताकत, उस समाज के सम्पर्क केन्द्रों एवं उस समाज के विभिन्न वर्गों के बीच अंतरक्रिया पर आधारित होती है। वे हिन्दुओं में सम्पर्क केन्द्रों एवं परस्पर अन्तर्क्रिया के अभाव को समाज के विखण्डन के लिए जिम्मेदार मानते थे। उनका मत है कि ''गैर–हिन्दुओं में भी वैसी ही जातियां हैं जैसी कि हिन्दुओं के लिए हैं। किसी मुसलमान या सिख से पूछिये कि वह कौन है तो वह यही कहेगा कि वह मुसलमान या सिख है वह अपनी जाति नहीं बतायेगा, हालांकि उसकी जाति हैं। आप उसके इस उत्तर से संतुष्ट हो जायेंगे।'' इसके विपरीत जब कोई व्यक्ति अपने को हिन्दू बताता है तो कोई व्यक्ति उस हिन्दू की जाति पूछे बिना सन्तुष्ट नहीं होगा।

अम्बेडकर गैर–हिन्दुओं के मुकाबले की इसी जातीय जड़ता के उन्मूलन के पक्षधर थे। उनका विचार था कि ''आदर्श समाज गतिशील होना चाहिए।उसमे ऐसी भरपूर सरणियाँ होनी चाहिए कि वह समाज के एक हिस्से में हुए परिवर्तन की सूचना अन्य हिस्सों को दे दें। आदर्श समाज में अनेक प्रकार के हित होने चाहिए, जिन पर लोग सोच–समझकर विचार–विमर्श करें और उनके बारे में एक–दूसरे को बतायें और सब उसमें हिस्सा लें। समाज में विभिन्न लोगों के बीच सम्पर्क के ऐसे बहुविध और निर्विवाद बिन्दु होने चाहिए, जहां साहचर्य या संगठन के अन्य रूपों से भी संवाद हो सके। दूसरे शब्दों में, समाज के भीतर सम्पर्क का सर्वत्र प्रसार होना चाहिए। इसी को भाईचारा कहा जाता

है और यह प्रजातंत्र का दूसरा नाम है।'' अम्बेडकर ने जातीय समस्या को अत्यन्त गम्भीरता और अति–व्यापकता से महसूस किया था। उन्होंने कहा कि ''जाति की समस्या सैद्धान्तिक और व्यावहारिक रूप से बहुत बड़ी है। यह स्थानीय समस्या होने पर भी शरारतपूर्ण व्यवहार में अति समर्थ समस्या है। जब तक भारत में जातिवाद है, हिन्दू बाहरी लोगों से अन्तर्जातीय विवाह और अन्य सामाजिक सम्बन्ध स्वीकार नहीं करेंगे। हिन्दुओं के देशान्तर–गमन से भारतीय जातिवाद विश्व समस्या बन जाएगा।'' अम्बेडकर ने प्रत्येक आदर्श हिन्दू की तुलना ऐसे चूहों से की जो अपने ही बिल में घुसे रहना पसन्द करते हैं और दूसरों के सम्पर्क से बचना चाहते हैं। उनके विचार से हिन्दुओं के अन्दर समग्र वर्ग की चेतना का सर्वथा अभाव है। हिन्दुओं की चेतना जाति से शुरू होकर जाति पर ही खत्म हो जाती है।

अम्बेडकर ने भारत में ब्रिटिश राज के परिणामों के सन्दर्भ में कार्ल मार्क्स की भविष्यवाणी को भी पूरी तरह नकार दिया। मार्क्स का विचार था कि ''रेल–व्यवस्था से उत्पन्न आधुनिक उद्योग उस वंशगत श्रम–विभाजन को नष्ट कर देगा, जिस पर भारत की प्रगति और शक्ति में निर्णायक रूप से बाधक भारतीय जातियां आधारित हैं।'' अम्बेडकर का मत है कि ''जिस कलात्मक ढंग से विभिन्न जातियों में सामाजिक और धार्मिक अधिकार वितरित (किसी जाति की ज्यादा तो कुछ को कम) किए गए थे, कार्ल मार्क्स के नारे का वह कलात्मक ढंग जाति–व्यवस्था के विरूद्ध हिन्दुओं को उत्तेजित करने के लिए एकदम बेकार है। जातियां उच्च और अवर प्रमुख सत्ताओं की श्रेणीकृत व्यवस्था होती है। वे अपने दर्जे के लिए सतर्क होती हैं और यह जानती हैं कि यदि जातियों का विलय हुआ तो उनमें से कुछ भाषा में यूं कहा जाएगा कि आप जाति–व्यवस्था पर आक्रमण करने के लिए हिन्दुओं की आम लामबंदी नहीं कर सकते।'' वस्तुतः अम्बेडकर भारतीय समाज के सन्दर्भ में आर्थिक कारकों की महत्वहीनता और सामाजिक–धार्मिक कारकों की महत्ता से भली–भाँति अवगत थे।

भारतीय सन्दर्भों में धर्म की अत्यधिक महत्ता से परिचित रहते हुए यद्यपि अम्बेडकर ने मनुस्मृति को सार्वजनिक तौर पर जलाने के कार्यक्रम को प्रेरणा दी थी, तथापि इस अवसर पर उन्होंने गीता सहित अन्य पवित्र समझे जाने वाले हिन्दू ग्रन्थों के विरूद्ध कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की थी। मनुस्मृति जलाए जाने की घटना मद्रास मं गैर–ब्राह्मण पार्टी के द्वारा भी की जा चुकी थी। इस प्रकार अम्बेडकर मनुस्मृति का अग्निदाह करने वाले पहले व्यक्ति नहीं थे। महाड़ सत्याग्रह के दौरान एक ब्राह्मण के हाथों मनुस्मृति का अग्निदाह करवाने के पीछे उनकी मंशा साफ प्रगट होती है कि वे हिन्दू समाज के ताने–बाने को दुरूस्त करना चाहते थे, नष्ट–भ्रष्ट नहीं।

अम्बेडकर ने यूरोप और अमेरिका में दबाव समूहों के महत्व व निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करने वाली उनकी शक्ति को देखा था। उन्होंने अपने राजदर्शन में दबाव–समूहों को परिभाषित करने का कोई प्रयास किया ऐसा कोई तथ्य अध्ययन के समक्ष प्रस्तुत नहीं हुआ। परन्तु जिस प्रकार से उन्होंने दलितों को संगठित होने व राजनीतिक प्रक्रिया को प्रभावित करने का आह्वान किया, उससे ऐसा आभास जरूर होता है कि ऐसा उन्होंने दबाव–समूहों के प्रभाव व निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करने वाली उनकी शक्ति से प्रभावित होकर ही किया। यूरोप और अमेरिका में दबाव समूहों का जो स्वरूप है, उसके अन्तर्गत वे चुनाव में हिस्सा नहीं लेते वरन् पर्दे के पीछे से इसे प्रभावित करने का प्रयास करते हें। अम्बेडकर के राजनीतिक चिन्तन में जिस दबाव–समूह का आभास होता है, वह दबाव–समूह की अवधारणा प्रस्तुत की। एक भाषण में उन्होंने कहा कि ''हमें अपने को एक तीसरी पार्टी में संगठित करना चाहिए। जिससे यदि समाजवादी पार्टी या कांग्रेस पार्टी को बहुमत न मिले तो उस स्थिति में वह हमारे पास, हमारे मतों के लिए आयें और इस स्थिति में हम सत्ता में एक संतुलन बनाए रख सकेंगे। हम अपना राजनीतिक समर्थन अपनी शर्तों पर दे सकेंगे।'' अम्बेडकर के इस कथन के सन्दर्भ में यदि उनके विचारों को खोजने का प्रयास किया जाए तो यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि वे दलितों को इतना संगठित करना चाहते थे जिससे कि वे राजनीतिक निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित किया। यह उनके राजनीतिक संघर्ष और अस्तित्व का ही तकाजा था कि कांग्रेस और गाँधी दलितोत्थान की दिशा में सक्रिय रूप से उन्मुख हुए। संसद, विधानसभाओं और सरकारी नौकरियों में आरक्षण, कमजोर संघर्ष और अस्तित्व का ही तकाजा था कि कांग्रेस और गांधी दलितोत्थान की दिशा में सक्रिय रूप से उन्मुख हुए। संसद, विधानसभाओं और सरकारी नौकरियों में आरक्षण, कमजोर वर्गों के लिए विभिन्न संवैधानिक प्रावधान उनके सक्रिय प्रयासों से उत्पन्न दलित चेतना का ही परिणाम है। वर्तमान सन्दर्भों मतें भी अम्बेडकर की संकल्पनाओं का स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। दलितों ने उस स्थिति को प्राप्त कर लिया है, जहाँ से वे राजनीतिक निर्णय प्रक्रिया को स्पष्टतः प्रभावित कर रहे हैं। पंचायतों से लेकर राष्ट्रपति पद तक के चुनाव इस तथ्य को प्रमाणित करते हैं। प्रत्येक बार अगले 10 वर्ष के लिए केन्द्र सरकार द्वारा आरक्षण व्यवस्था का विस्तार किया जाना भी इन तथ्यों की पुष्टि करता है।

यद्यपि अम्बेडकर ने परम्परागत समाज द्वारा स्थापित 'वाद' के विरूद्ध, प्रारम्भिक समय में 'प्रतिवाद' की बजाय 'संवाद' की स्थापना के लिए ही वास्तविक तौर पर प्रयास किए थे लेकिन हिन्दू समाज की जड़ता के सामने अपने प्रयासों की विफलता को देखकर ही वे अपनी रणनीति बदलने के लिए मजबूर हुए। जाति उन्मूलन के मार्ग में आने वाली बाधाओं का उन्हें बखूबी अहसास था। उनका विचार था कि ''जातियों का एक अजीब स्तरीकरण हुआ है। जातियों के श्रेणीकरण में सम्मान का आरोही क्रम और अपमान अवरोही क्रम है। सारा समाज और उसका वातावरण इस दृष्ट ब्राह्मणी आदर्श से दूषित हो गया है। अतः जाति–प्रथा के खिलाफ हिन्दुओं में आम सहयोग प्राप्त करना नितान्त कठिन है।''

अम्बेडकर ने 'संवाद' की स्थापना के लिए अन्तर्जातीय विवाहों की वकालत की। उनका विश्वास था कि ''उक्त मिश्रण से ही अपनेपन की भावना पैदा होगी और जब तक यह अपनत्व की, बंधुत्व की भावना पैदा नहीं होगी, तब तक जाति–प्रथा द्वारा पैदा की गई अलगाव की भावना समाप्त नहीं होगी।''

ऐसा प्रतीत होता है कि अम्बेडकर हिन्दू धर्म के प्रति विद्रोही की बजाय उसके एक सच्चे सुधारक थे। उनका

विचार था कि ''हिन्दूओं को चाहिए कि सामाजिक विरासत में जो उपयोगी है उसे संभालकर रखें और अगली पीढ़ियों को दें और शेष नष्ट कर दें।'' अम्बेडकर को ''उपनिषदों के उन सिद्धान्तों को ग्रहण करने में कोई आपति नहीं थी जो स्वतन्त्रता, समानता और बंधुत्व की भावना के अनुरूप थे। लेकिन हिन्दू समाज में पूर्ण जीवनमूल्यों में आमूल परिवर्तन।'' उन्होंने बदलाव या परिवर्तन शब्द नापसंद होने की स्थिति में हिन्दुओं से इसे 'नया जीवन' कहने की भी पेशकश की।

अम्बेडकर ने परम्परागत समाज द्वारा निर्धारित उच्च वर्गो के विशेषाधिकारों के उन्मूलन की पुरजोर वकालत की। साथ ही दलित वर्गों के विकास के लिए विशेषाधिकारों का समर्थन कर यद्यपि विरोधाभासी कार्य किया तथापि ऐसा प्रतीत होता है कि समसामयिक परिस्थितियों में दलित वर्ग की शोचनीय स्थिति के कारण उनका विचार प्रासंगिक ही था। यह उल्लेखनीय है कि उन्होंने दलितों के लिए आजीवन विशेषाधिकारों का समर्थन नहीं किया, वरन् इसके लिए उन्होंने एक निश्चित समय–सीमा तय की थी।

अम्बेडकर द्वारा सामाजिक अवनति के आर्थिक कारकों की अपेक्षा के पीछे भी समसामयिक परिस्थितियां जिम्मेदार प्रतीत होती हैं। यद्यपि मार्क्स के विपरीत उनकी मान्यता थी कि मानव आर्थिक शक्तियों का दास नहीं है और अर्थ ही मानव शक्ति का आधार नहीं है तथापि अपने 'राज्य समाजवाद' के सिद्धान्त के माध्यम से दलितों के हित में जमींदारी उन्मूलन, उद्योगों के राष्ट्रीयकरण और सामूहिक खेती की पुरजोर वकालत की। इस दृष्टि से अम्बेडकर द्वारा प्रतिपादित 'राज्य समाजवाद' का सिद्धान्त गाँधी के :ट्रस्टीशिप' सिद्धान्त से प्रभावी प्रतीत होती है क्योंकि 'ट्रस्टशिप' का सिद्धान्त पूँजीपतियों की दया पर निर्भर है जबकि अम्बेडकर के राज्य समाजवाद का सिद्धान्त व्यक्ति के अधिकार भाव को स्पष्ट करता है तथा कानूनी प्रत्याभूति प्रदान करता है। ऐसा प्रतीत होता है कि अम्बेडकर ने आर्थिक कारकों की पूर्ण उपेक्षा नहीं की वरन् तत्कालीन सन्दर्भों में सामाजिक–धार्मिक कारकों की अति–महत्ता के कारण आर्थिक कारकों को कम महत्व प्रदान किया।

अम्बेडकर ने गाँधी द्वारा अछूतों के हरिजन नामकरण पर यह महसूस किया कि हरिजन नामकरण हीनता का ही पर्याय है। इससे ऊँच–नीच की भावना बनी रहेगी। ऐसे अपमानजनक नामकरण से उन्हें चिढ़ थी। 'हरिजन' नामकरण पर ऐतराज और 'अनुसूचित जाति' नामकरण पर सहमति के सन्दर्भ में अम्बेडकर के किसी अधिकृत और प्रामाणिक वक्तव्य के अभाव में ऐसा प्रतीत होता है कि 'हरिजन' शब्द पर उन्होंने इसलिए ऐतराज किया क्योंकि यह नामकरण किसी व्यक्ति ने किया, जिसमें उन्हें हीनता की अनुभूति हुई, जबकि 'अनुसूचित जाति' नामकरण कानून या संविधान के माध्यम से व्यक्त हुआ, जिसमें हीनता की बजाय अधिकारबोध निहित है।

''अम्बेडकर ने तीन महापुरुषों को अपना प्रेरणास्तोत बनाया है। उनमें पहले कबीर, दूसरे महात्मा ज्योतिबा फुले और तीसरे थे भगवान बुद्ध। कबीर ने उन्हें भक्ति भावना प्रदान की, ज्योतिबा फुले ने उन्हें ब्राह्मण विरोध के लिए प्रेरित किया, सामूहिक पश्चाताप का विचार दिया और शिक्षा तथा आर्थिक उत्थान का सन्देश दिया। बुद्ध से उन्हें मानसिक और दार्शनिक पिपासा बुझाने वाला अमृत मिला और अछूतों के उद्धार का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ, जिसका माध्यम था सामूहिक धर्म–परिवर्तन।''

ऐसा प्रतीत होता है कि अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म अवश्य ग्रहण किया, पर वे बौद्ध धर्म की कार्यप्रणाली से पूरी तरह संतुष्ट नहीं हुए। उन्होंने बौद्ध धर्म में भी अपनी शर्तों का समावेश करना चाहा और जिस प्रकार से उन्होंने हिन्दू धर्म में सुधार की अपेक्षा की थी उसी प्रकार की अपेक्षा उन्होंने बौद्ध धर्म से भी की। अम्बेडकर ने कहा कि ''भिक्षु अपने मठ में भोजन करते हुए रहता है। निस्सन्देह वह भोजन तो एक बार करता है और शान्तिमय अपना समय व्यतीत करता है। सम्भवतः वह अध्ययनरत् रहता है, परन्तु अधिकांश में उन्हें सोता पाता हूँ और संध्या को वे थोड़ी–सी संगीत में रूचि ले लेते हैं। धर्म के प्रचार का यह कोई तरीका नहीं है। अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म के स्वयं को असुविधाजनक लगने वाले अंशों का भिक्षुओं के क्षेपक माना और उनकी निन्दा की।

''दरअसल वह विरोधों के झंझावात से उठे थे और उसी में उनका अवसान हुआ था। इसी कारण उनके कुछ विचार कटुतापूर्ण प्रतीत होते हैं, परन्तु उनके विचारों में अन्तनिहित कटुता का, उन्हें समाज से मिली पीड़ाओं और यातनाओं के सन्दर्भ में ही मूल्यांकन किया जाना चाहिए। इस दृष्टि से उनके विचार निश्चित तौर पर दलित चेतना युक्त सामाजिक उत्थान के लिए पूर्णतः प्रासंगिक हैं।

दलित समस्या मूलतः दुहरी है – (1) दलित और सवर्ण के बीच एवं (2) दलित और दलित में परस्पर। वर्तमान समय में भी दलितों की विभिन्न उपजातियों के बीच रोटी–बेटी का सम्बन्ध न होने के साथ ही अस्पृश्यता की भावना भी मौजूद है। अम्बेडकर दलितों और सवर्णों के बीच के अन्तर को मिटाने के साथ–साथ दलितों के बीच स्थापित विभिन्न उपजातियों के भेदभाव को समाप्त करना चाहते थे, ऐसी कुव्यवस्थाओं के खिलाफ आज भी सार्थक प्रयासों की महती प्रासंगिकता है।

अम्बेडकर से संबद्ध साहित्य के अध्ययन के आधार पर बहुधा यह भ्रम होता है कि वे सिर्फ जातीय दृष्टिकोण से या केवल दलितों के लिए ही सोचते थे, परन्तु नारी उत्थान के सन्दर्भ में उनके विचारों से ऐसा प्रतीत होता है कि उनके विचार उन समस्त पीड़ितों और शोषितों तक विस्तारित थे जो सामाजिक यातनाओं के बीच जी रहे थे। ऐसा प्रतीत होता है कि नारी उत्थान के प्रति समर्पित भावना से काम करते हुए उनके विचारों में जाति और वर्ग आड़े नहीं आए। वे न केवल दलित महिलाओं के अधिकारों के समर्थक थे, वरन् उच्च वर्गों की महिलाओं के अधिकारों के भी पक्षधर थे।

अम्बेडकर की उक्त मान्यताओं के आधार पर ऐसा स्पष्ट होता है कि यदि तत्कालीन समाज में दलितों के साथ कोई अन्य वर्ग भी पीड़ित रहा होता तो वे निश्चित रूप से उसके उत्थान के लिए आगे आते। वस्तुतः दलित चेतना की दृष्टि से अम्बेडकर का सर्वाधिक मुखर योगदान है, जिसे वर्तमान समय में भी महसूस किया जा सकता है।

सन्दर्भ

1. गुप्ता द्वारका प्रसाद : महात्मा गाँधी और अस्पश्यता, पृष्ठ 120–24, ज्ञान भारती, दिल्ली।
2. अहीर डी.सी. : गाँधी और अम्बेडकर ए कम्परेटिव स्टडी, पृष्ठ 2, ब्लूमून बुक्स, नई दिल्ली।

3. अम्बेडकर डॉ. बी.आर. : कांग्रेस और गांधी ने अछतों के लिए क्या किया? पृष्ठ 44–58, समता साहित्य प्रकाशन, लखनऊ
4. अम्बेडकर डॉ. बी. आर. : भारत जाति प्रथा (अनु.), पृष्ठ 7–8, कंचन प्रकाशन दिल्ली।
5. जाटव डॉ. डी. आर. : भारतीय समाज एवं विचारधाराएँ, पृष्ठ 295, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
6. वर्मा वी. पी. : आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन, पृष्ठ 588, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा–3
7. वकील ए. के. : गाँधी अम्बेडकर डिस्ट्यूट एन एनालिटीकल स्टडी, पृष्ठ 29, आशीष पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
8. उद्धृत–शहरे डॉ. एम.एल. : म.प्र. संदेश 10 अप्रैल, 1991, भोपाल।
9. उद्धृत–भगवानदास : डॉ. अम्बेडकर के विचार, पृष्ठ 37, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
10. उद्धत–सिंह डॉ. रामगोपाल : भारतीय दलित समस्याएँ एवं समाधान, पृष्ठ 34, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
11. शहारे डॉ. एम.एल. : डॉ. अम्बेडकर हिज लाइफ एण्ड वर्क, पृष्ठ 109, एन.सी.ई.आर.टी. अकादमी, नई दिल्ली।
12. शर्मा जी.पी. : डॉ. अम्बेडकर जन्म–शताब्दी शोध संगोष्ठी में 'डॉ. अम्बेडकर के विचारों की प्रासंगिकता' शीर्षक पर प्रस्तुत शोध–पत्र, 14 अप्रैल, 1992, डॉ. भगवत सहाय महाविद्यालय, ग्वालियर।
13. शर्मा डॉ. शंकरदयाल : म.प्र. संदेश, भोपाल, 10 अप्रैल, 1991
14. भगवानदास (संपा.) : दज स्पोक अम्बेडकर, पृष्ठ 30, बुद्धिस्ट पब्लिशिंग हाउस, जालंधर।
15. भटनागर डॉ. नगेन्द्र : डॉ. अम्बेडकर जीवन और दर्शन, पृष्ठ 24, किताब घर, नई दिल्ली।
16. हबीब इरफान : भारतीय इतिहास में जाति और मुद्रा, पृष्ठ 23, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
17. विभिन्न समाचार पत्रों में प्रकाशित सम्पादकीय व स्तम्भ लेख जैसे – सहारा समय, राजस्थान पत्रिका, दैनिक जागरण, नवभारत टाइम्स, पंजाब केसरी, अमर उजाला, हिन्दूस्तान टाइम्स, टाइम्स ऑफ इण्डिया आदि।
18. सिंह डॉ. अम्बेडकर के सामाजिक विचार, पृष्ठ 17, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
19. सिंह मोहन : डॉ. भीमराव अम्बेडकर व्यक्तित्व के कुछ पहलू, पृष्ठ 3–4, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
20. महात्मा गाँधी डल म्ाचमतपउमदज ूपजी ज्तनजी तथा यंग इण्डिया, नवजीवन व हरिजन आदि पत्रिकाओं में लिखे गये महात्मा गाँधी के लेख।
21. मंत्री गणेश : गाँधी और अम्बेडकर, पृष्ठ 139, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली।
22. कुबेर डब्ल्यू. एन. : आधुनिक भारत के निर्माता भीमराव अम्बेडकर, पृष्ठ 8, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
23. कीर धनंजय : डॉ. अम्बेडकर – लाइफ एण्ड मिशन, पृष्ठ 252–53, पॉपुलर प्रकाशन, बम्बई।
24. कृपलानी जे.बी. : गाँधी हिज लाइफ एण्ड थॉट, पृष्ठ 148, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
25. बाली एल. आर. : डॉ. अम्बेडकर ने क्या किया? पृष्ठ 90, भीम पत्रिका पब्लिकेशन्स, जालंधर
26. बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय खण्ड–1, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
27. बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर राइटिंग एण्ड स्पीचेज, वाल्यूम (2), पृष्ठ 465, महाराष्ट्र सरकार प्रकाशन, बम्बई
28. ठेंगड़ी दत्तोपंत : डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर, पृष्ठ 15, लोकहित प्रकाशन, लखनऊ।